IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य

डॉ सरोज

एसोशिएट प्रोफेसर -हिन्दी विभाग, का.सु.साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या

सारांश

व्यंग्य सम्राट हरिशंकर परसाई 22 अगस्त, 1924 को मध्य प्रदेश में होशंगाबाद के जमानी में पैदा हुए. 10 अगस्त, 1995 को उन्होंने इस दुनिया को अलविदा कह दिया. उन्होंने अपनी लेखनी के दम पर व्यंग्य को हिंदी साहित्य में एक विधा के तौर पर मान्यता दिलाने का काम किया.हरिशंकर परसाई के जीवन परिचय की बात करें तो परसाईजी का शुरूआती जीवन पेशानियों में बीता. मैट्रिक नहीं हुए थे कि उनकी मां की मृत्यु हो गई. इसके बाद असाध्य बीमारी से पिता की भी मृत्यु हो गई. गहन आर्थिक अभावों के बीच चार छोटे भाई-बहनों की जिम्मेदारी परसाई पर आ गई.जिस तरह आपने-हमने कोरोना महामारी का भनायक रूप देखा, उसी तरह हरिशंकर परसाई ने 'प्लेग' की भयावहता को झेला. उन्होंने अपनी आत्मकथा 'गर्दिश के दिन' में इसका जिक्र भी किया है. इस गर्दिश को परसाईजी ने ताउम्र झेला. तमाम मुश्किलों के बाद उन्होंने अपनी पढ़ाई पूरी की. उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया फिर 'डिप्लोमा इन टीचिंग'.कुछ सालों बाद शाजापुर में एक कॉलेज के प्रिंसिपल नियुक्त होने का प्रस्ताव आया, पर उन्होंने इसे भी अस्वीकार कर दिया और जबलपुर में रहकर स्वतंत्र रूप से लेखन करना स्वीकार किया.परसाई की रचनाएं व्यंग्य के अलावा हरिशंकर परसाई (Satirist Hari Shankar Parsai) के कहानी संग्रह 'हँसते हैं रोते हैं', 'जैसे उनके दिन फिरे', 'भोलाराम का जीव' उपन्यास 'रानी नागफनी की कहानी', 'तट की खोज', 'ज्वाला और जल' तथा संस्मरण 'तिरछी रेखाएँ' भी प्रकाशित हुए. उनकी रचनाओं में तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेईमानी की परत, वैष्णव की फिसलन, पगडण्डियों का जमाना, शिकायत मुझे भी है, सदाचार का ताबीज, विकलांग श्रद्धा का दौर, तुलसीदास चंदन घिसैं, हम इकउम्र से वाकिफ हैं, जाने पहचाने लोग (व्यंग्य निबंध-संग्रह) शामिल हैं. उनकी रचनाओं के अनुवाद लगभग सभी भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी में हुआ. उनकी सभी रचनाएं 'परसाई रचनावली' शीर्षक से छह खंडों में संकलित हैं.

परिचय

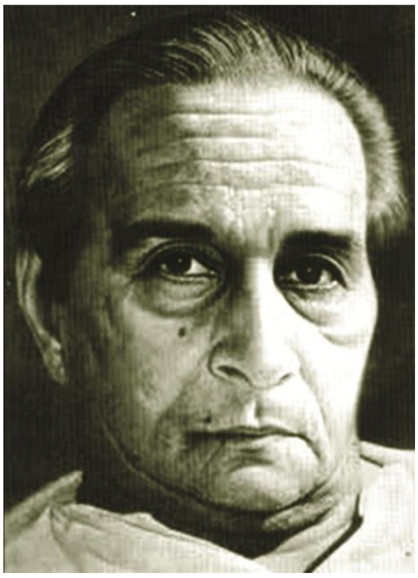

हरिशंकर परसाई व्यंग्य के विषय में ख़ुद कहा करते थे कि व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, अत्याचारों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश करता है. उनकी रचनाएं उनके इस कथ्य की गवाह हैं. हिन्दी के सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई किसी भी परिचय के मोहताज़ नहीं हैं. हिन्दी साहित्य में व्यंग्य विधा के लिए, हर वर्ग के पाठक की चेतना में अगर किसी का नाम पहले-पहल आता है, तो वो परसाई ही हैं.

व्यंग्य विधा को अपने सुदृढ़ और आधुनिक रूप में खड़ा करने में परसाई के योगदान को आलोचकों ने एक सिरे से स्वीकार किया है.

एक आधुनिक विधा के रूप में व्यंग्य की ख्याति 20वीं सदी में हुई. पाश्चात्य चिंतक जॉनथन स्विफ्ट व्यंग्य के विषय में कहते थे कि 'व्यंग्य एक ऐसा दर्पण है जिसमें देखने वाले को अपने अतिरिक्त सभी का चेहरा दिखता है.'

इस विधा का मुख्य उद्देश्य है, व्यक्ति और उसके सामाजिक संदर्भों में दिखने वाली किसी भी विसंगति पर कुठाराघात करना, भले ही यह संदर्भ, व्यक्ति और समाज के संबंध का हो सकता है, वर्ग और जाति के समीकरण का हो सकता है या विभिन्न विचारधाराओं के टकराव का.

एक व्यंग्यकार, व्यक्ति-जीवन की विडंबनाओं का एक ऐसा रेखाचित्र खींचता है जिसे पढ़कर एक चेतन पाठक अपने आप से भी सवाल उठाने पर विवश हो जाता है.

व्यंग्य के विषय में स्वयं परसाई कहा करते थे 'व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, अत्याचारों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश करता है.'

22 अगस्त 1924 को होशंगाबाद, मध्य प्रदेश के जमानी ग्राम में जन्मे परसाई मध्यवर्गीय परिवार से आते थे. अल्पायु में ही मां की मृत्यु के बाद पिता की भी कालांतर में एक असाध्य बीमारी के बाद मृत्यु हो गई.

अब चार छोटे भाई-बहनों की जिम्मेदारी परसाई पर ही थी. इस प्रकार इनका आरंभिक जीवन गहन आर्थिक अभावों के बीच बीता.

अपने आत्मकथ्य 'गर्दिश के दिन' में उन्होंने बचपन की सबसे तीखी याद 'प्लेग' की भयावहता का ज़िक्र किया है,

'1936 या 37 होगा. मैं शायद आठवीं का छात्र था. कस्बे में प्लेग पड़ी थी... रात को मरणासन्न मां के सामने हम लोग आरती गाते. गाते-गाते पिताजी सिसकने लगते, मां बिलखकर हम बच्चों को हृदय से चिपटा लेती और हम भी रोने लगते... ऐसे भयकारी त्रासदायक वातावरण में एक रात तीसरे पहर मां की मृत्यु हो गई.....पांच भाई-बहनों में मृत्यु का अर्थ मैं ही समझता था.'

पर जिस गर्दिश की बात परसाई कहते थे, वह जीवन पर्यंत बनी ही रही. वे स्वयं स्वीकार करते थे कि गर्दिश का सिलसिला बदस्तूर है, मैं निहायत बेचैन मन का संवेदनशील आदमी हूं. मुझे चैन कभी मिल ही नहीं सकता. इसलिए गर्दिश नियति है.

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

अपनी जीवनी में परसाई इस बात का खुलासा करते हुए कहते हैं कि बाल्यकाल में जिस व्यक्ति ने उन्हें सबसे ज़्यादा प्रभावित किया वह थीं उनकी बुआ. परसाई जी ने उनसे ही अपनी ज़िंदगी के कुछ मूल-मंत्र सीखे थे: जैसे, निस्संकोच किसी से भी उधार मांग लेना या बेफिक्र रहना. बड़े-से-बड़े संकट में भी वो यही कहते कोई घबराने की बात नहीं, सब हो जाएगा.

संघर्षों से भरे अपने जीवन में परसाई ने स्वयं को सदैव मजबूत बनाए रखा:

'मैंने तय किया- परसाई, डरो किसी से मत. डरे कि मरे. सीने को ऊपर कड़ा कर लो, भीतर तुम जो भी हो. ज़िम्मेदारी को गैर ज़िम्मेदारी के साथ निभाओ.'

परसाई के व्यक्तित्व में धार्मिक रूढ़िवादिता, जातीयता, धार्मिक कट्टरता इन सबके विरुद्ध जो एक खास किस्म का विरोधी तेवर दिखलाई पड़ता है उसका बहुत कुछ श्रेय वह अपनी बुआ को देते हैं.

उनसे ही उन्होंने सीखा कि जातीयता और धर्म बेकार के ढकोसले हैं. स्वयं उनकी बुआ ने पचास साल की अवस्था में तमाम विरोधों के बावजूद एक अनाथ मुस्लिम लड़के को अपने यहां शरण दे रखी थी.

हरिशंकर परसाई सागर विश्वविद्यालय में मुक्तिबोध पीठ के निदेशक रहे. उन्होंने जबलपुर से साहित्यिक मासिक पत्रिका 'वसुधा' का प्रकाशन किया. उन्होंने अनेक पत्र-पत्रिकाओं में वर्षों तक नियमित स्तम्भ लिखे.

राजकमल प्रकाशन (Rajkamal Prakashan) से प्रकाशित हरिशंकर परसाई के व्यंग्य संग्रह से प्रस्तुत है व्यंग्य रचना 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र'

चार बार मैं गणतंत्र-दिवस का जलसा दिल्ली में देख चुका हूं. पांचवीं बार देखने का साहस नहीं. आखिर यह क्या बात है कि हर बार जब मैं गणतंत्र-समारोह देखता, तब मौसम बड़ा क्रूर रहता. छब्बीस जनवरी के पहले ऊपर बर्फ पड़ जाती है. शीत-लहर आती है, बादल छा जाते हैं, बूंदाबांदी होती है और सूर्य छिप जाता है. जैसे दिल्ली की अपनी अर्थनीति नहीं है, वैसे ही अपना मौसम भी नहीं है. अर्थनीति जैसे डॉलर, पौंड, रुपया, अन्तरराष्ट्रीय मुद्राकोष या भारत-सहायता क्लब से तय होती है, वैसे ही दिल्ली का मौसम कश्मीर, सिक्किम, राजस्थान आदि तय करते हैं.

इतना बेवकूफ भी नहीं हूं कि मान लूं, जिस साल मैं समारोह देखता हूं, उसी साल ऐसा मौसम रहता है. हर साल देखनेवाले बताते हैं कि हर गणतंत्र-दिवस पर मौसम ऐसी ही धूपहीन ठिठुरनवाला होता है.

आखिर बात क्या है? रहस्य क्या है?

जब कांग्रेस टूटी नहीं थी, तब मैंने एक कांग्रेस मंत्री से पूछा था कि यह क्या बात है कि हर गणतंत्र-दिवस को सूर्य छिपा रहता है? सूर्य की किरणों के तले हम उत्सव क्यों नहीं मना सकते?

उन्होंने कहा, ''ज़रा धीरज रखिए. हम कोशिश में लगे हैं कि सूर्य बाहर आ जाए. पर इतने बड़े सूर्य को बाहर निकालना आसान नहीं है. वक्त लगेगा. हमें सत्ता के कम-से-कम सौ वर्ष तो दीजिए!''

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

दिये. सूर्य को बाहर निकालने के लिए सौ वर्ष दिये, मगर हर साल उसका कोई छोटा कोना निकलता तो दिखना चाहिए. सूर्य कोई बच्चा तो है नहीं जो अन्तरिक्ष की कोख में अटका है, जिसे आप एक दिन ऑपरेशन करके निकाल देंगे.

इधर जब कांग्रेस के दो हिस्से हो गए तब मैंने एक इंडिकेटी कांग्रेसी से पूछा. उसने कहा, ''हम हर बार सूर्य को बादलों से बाहर निकालने की कोशिश करते थे, पर हर बार सिंडिकेटवाले अड़ंगा डाल देते थे. अब हम वादा करते हैं कि अगले गणतंत्र-दिवस पर सूर्य को निकालकर बताएंगे.'

एक सिंडिकेटी पास खड़ा सुन रहा था. वह बोल पड़ा, ''यह लेडी (प्रधानमंत्री) कम्युनिस्टों के चक्कर में आ गई है. वही उसे उकसा रहे हैं कि सूर्य को निकालो. उन्हें उम्मीद है, बादलों के पीछे से उनका प्यारा 'लाल सूरज' निकलेगा. हम कहते हैं कि सूर्य को निकालने की क्या ज़रूरत है? क्या बादलों को हटाने से काम नहीं चल सकता?'

मैं संसोपाई भाई से पूछता हूं. वह कहता है, "सूर्य गैर-कांग्रेसवाद पर अमल कर रहा है. उसने डॉ. लोहिया के कहने से हमारा पार्टी-फॉर्म भर दिया था. कांग्रेसी प्रधानमंत्री को सलामी लेते वह कैसे देख सकता है? किसी गैर-कांग्रेसी को प्रधानमंत्री बना दो, तो सूर्य क्या, उसके अच्छे भी निकल पड़ेंगे.'

जनसंघी भाई से भी मैंने पूछा. उसने साफ कहा, "सूर्य सेक्युलर होता तो इस सरकार की परेड में निकल आता. इस सरकार से आशा मत करो कि वह भगवान अंशुमाली को निकाल सकेगी. हमारे राज्य में ही सूर्य निकलेगा.'
साम्यवादी ने मुझसे साफ कहा, "यह सब सी.आई.ए. का षड्यंत्र है. सातवें बेड़े से बादल दिल्ली भेजे जाते हैं.'
स्वतंत्र पार्टी के नेता ने कहा, "रूस का पिछलग्गू बनने का और क्या नतीजा होगा!'
प्रसोपा के भाई ने अनमने ढंग से कहा, "सवाल पेचीदा है. नेशनल कौंसिल की अगली बैठक में इसका फैसला होगा. तब बताऊंगा."
राजाजी से मैं मिल न सका. मिलता तो वह इसके सिवा क्या कहते कि इस राज में तारे निकलते हैं, यही गनीमत है!
मैं इन्तज़ार करूंगा, जब भी सूर्य निकले.

विचार – विमर्श

स्वतंत्रता-दिवस भी तो भरी बरसात में होता है. अंग्रेज़ बहुत चालाक हैं. भरी बरसात में स्वतंत्र करके चले गए. उस कपटी प्रेमी की तरह भागे जो प्रेमिका का छाता भी ले जाए. वह बेचारी भीगती बस-स्टैंड जाती है, तो उसे प्रेमी की नहीं, छाता-चोर की याद सताती है.

स्वतंत्रता-दिवस भीगता है और गणतंत्र-दिवस ठिठुरता है.

मैं ओवरकोट में हाथ डाले परेड देखता हूं. प्रधानमंत्री किसी विदेशी मेहमान के साथ खुली गाड़ी में निकलती हैं. रेडियो टिप्पणीकार कहता है, 'घोर करतल-ध्वनि हो रही है.' मैं देख रहा हूं, नहीं हो रही है. हम सब तो कोट में हाथ डाले बैठे हैं. बाहर निकालने का जी नहीं होता. हाथ अकड़ जाएंगे.

लेकिन हम नहीं बजा रहे हैं, फिर भी तालियां बज रही हैं. मैदान में ज़मीन पर बैठे वे लोग बजा रहे हैं, जिनके पास हाथ गरमाने के लिए कोट नहीं है. लगता है, गणतंत्र ठिठुरते हुए हाथों की तालियों पर टिका है. गणतंत्र को उन्हीं हाथों की ताली मिलती है, जिनके मालिक के पास हाथ छिपाने के लिए गर्म कपड़ा नहीं है.

पर कुछ लोग कहते हैं, 'गरीबी मिटनी चाहिए.' तभी दूसरे कहते हैं, 'ऐसा कहनेवाले प्रजातंत्र के लिए खतरा पैदा कर रहे हैं.'

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

गणतंत्र-समारोह में हर राज्य की झांकी निकलती है. ये अपने राज्य का सही प्रतिनिधित्व नहीं करतीं. 'सत्यमेव जयते' हमारा मोटो है मगर झांवकियां झूठ बोलती हैं. इनमें विकास-कार्य, जनजीवन, इतिहास आदि रहते हैं. असल में हर राज्य को उस विशिष्ट बात को यहां प्रदर्शित करना चाहिए जिसके कारण पिछले साल वह राज्य मशहूर हुआ.

यह कितना बड़ा झूठ है कि कोई राज्य दंगे के कारण अन्तरराष्ट्रीय ख्याति पाए, लेकिन झांकी सजाए लघु-उद्योगों की. दंगे से अच्छा गृह-उद्योग तो इस देश में दूसरा है नहीं. मेरे मध्य प्रदेश ने दो साल पहले सत्य के नज़दीक पहुंचने की कोशिश की थीं. झांकी में अकाल-राहत कार्य बतलाए गए थे. पर सत्य अधूरा रह गया था. मध्य प्रदेश उस साल राहत-कार्यों के कारण नहीं, राहत-कार्यों में घपले के कारण मशहूर हुआ था. मेरा सुझाव माना जाता तो मैं झांकी में झूठे मस्टर-रोल भरते दिखाता, चुकारा करनेवाले का अंगूठा हज़ारों मूर्खों के नाम के आगे लगवाता; नेता, अफसर, ठेकेदार के बीच लेन-देन का दृश्य दिखाता. उस झांकी में वह बात नहीं आई. पिछले साल स्कलों की टाट-पट्टी कांड से हमारा राज्य मशहूर हुआ. मैं पिछले साल की झांकी में यह दृश्य दिखाता—मंत्री, अफसर वगैरह खड़े हैं और टाट-पट्टी खा रहे हैं.

जो हाल झांकियों का वही घोषणाओं का. हर साल घोषणा की जाती है कि समाजवाद आ रहा है, पर अभी तक नहीं आया. कहां अटक गया? लगभग सभी दल समाजवाद लाने का दावा करते हैं, लेकिन वह नहीं आ रहा.

मैं एक सपना देखता हूं. समाजवाद आ गया है और बस्ती के बाहर टीले पर खड़ा है. बस्ती के लोग आरती सजाकर उसका स्वागत करने को तैयार खड़े हैं, पर टीले को घेरे खड़े हैं कई तरह के समाजवादी. उनमें से हरेक लोगों से कहकर आया है कि समाजवाद को हाथ पकड़कर मैं ही वहीं लाऊंगा.

समाजवाद टीले से चिल्लाता है, ''मुझे बस्ती में ले चलो.''

मैं एक कल्पना कर रहा हूं :
दिल्ली में फरमान जारी हो जाएगा, ''समाजवाद सारे देश के दौरे पर निकल रहा है. उसे सब जगह पहुंचाया जाए. उसके स्वागत और सुरक्षा का पूरा बन्दोबस्त किया जाए.''
एक सचिव दूसरे सचिव से कहेगा, ''लो, ये एक और वी.आई.पी. आ रहे हैं. अब इनका इन्तज़ाम करो. नाक में दम है.''
कलेक्टरों को हुक्म चला जाएगा. कलेक्टर एस.डी.ओ. को लिखेगा, एस.डी.ओ. तहसीलदार को.
पुलिस-दफ्तरों में फरमान पहुंचेंगे, ''समाजवाद की सुरक्षा की तैयारी करो.''
दफ्तरों में बड़े बाबू छोटे बाबू से कहेंगे, ''काहे हो तिवारी बाबू, एक कोई समाजवादवाला कागज़ आया था न, ज़रा निकालो!''
तिवारी बाबू कागज़ निकालकर देंगे. बड़े बाबू फिर से कहेंगे, ''अरे, वह समाजवाद तो परसों ही निकल गया. कोई लेने नहीं गया स्टेशन. तिवारी बाबू, तुम कागज़ दबाकर रख लेते हो. बड़ी खराब आदत है तुम्हारी.''
तमाम अफसर लोग चीफ-सेक्रेटरी से कहेंगे, ''सर, समाजवाद बाद में नहीं आ सकता? बात यह है कि हम उसकी सुरक्षा का इन्तज़ाम नहीं कर सकेंगे. दशहरा आ रहा है. दंगे के आसार हैं. पूरा फोर्स दंगे से निपटने में लगा है.''
मुख्य सचिव दिल्ली लिख देगा, ''हम समाजवाद की सुरक्षा का इन्तज़ाम करने में असमर्थ हैं. उसका आना अभी मुल्तवी किया जाए.''
जिस शासन-व्यवस्था में समाजवाद के आगमन के कागज़ दब जाएं और जो उसकी सुरक्षा की व्यवस्था न करे, उसके भरोसे समाजवाद लाना है तो ले आओ. मुझे खास एतराज भी नहीं है. जनता के द्वारा न आकर अगर समाजवाद दफ्तरों के द्वारा आ गया तो एक ऐतिहासिक घटना हो जाएगी.

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

परिणाम

बदचलन

एक बाड़ा था। बाड़े में तेरह किराएदार रहते थे। मकान मालिक चौधरी साहब पास ही एक बँगले में रहते थे।

एक नए किराएदार आए। वे डिप्टी कलेक्टर थे। उनके आते ही उनका इतिहास भी मुहल्ले में आ गया था। वे इसके पहले ग्वालियर में थे। वहाँ दफ्तर की लेडी टाइपिस्ट को लेकर कुछ मामला हुआ था। वे साल भर सस्पेंड रहे थे। यह मामला अखबार में भी छपा था। मामला रफा-दफा हो गया और उनका तबादला इस शहर में हो गया।

डिप्टी साहब के इस मकान में आने के पहले ही उनके विभाग का एक आदमी मुहल्ले में आकर कह गया था कि यह बहुत बदचलन, चरित्रहीन आदमी है। जहाँ रहा, वहीं इसने बदमाशी की। यह बात सारे तेरह किराएदारों में फैल गई।

किरदार आपस में कहते - यह शरीफ आदमियों का मोहल्ला है। यहाँ ऐसा आदमी रहने आ रहा है। चौधरी साहब ने इस आदमी को मकान देकर अच्छा नहीं किया।

कोई कहते - बहू-बेटियाँ सबके घर में हैं। यहाँ ऐसा दुराचारी आदमी रहने आ रहा है। भला शरीफ आदमी यहाँ कैसे रहेंगे।

डिप्टी साहब को मालूम था कि मेरे बारे में खबर इधर पहुँच चुकी है। वे यह भी जानते थे कि यहाँ सब लोग मुझसे नफरत करते हैं। मुझे बदमाश मानते हैं। वे इस माहौल में अड़चन महसूस करते थे। वे हीनता की भावना से ग्रस्त थे। नीचा सिर किए आते-जाते थे। किसी से उनकी दुआ-सलाम नहीं होती थी।

इधर मुहल्ले के लोग आपस में कहते थे - शरीफों के मुहल्ले में यह बदचलन आ बसा है।

डिप्टी साहब का सिर्फ मुझसे बोलचाल का संबंध स्थापित हो गया था। मेरा परिवार नहीं था। मैं अकेला रहता था। डिप्टी साहब कभी-कभी मेरे पास आकर बैठ जाते। वे अकेले रहते थे। परिवार नहीं लाए थे।

एक दिन उन्होंने मुझसे कहा - ये जो मिस्टर दास हैं, ये रेलवे के दूसरे पुल के पास एक औरत के पास जाते हैं। बहुत बदचलन औरत है।

दूसरे दिन मैंने देखा, उनकी गर्दन थोड़ी सी उठी है।

मुहल्ले के लोग आपस में कहते थे - शरीफों के मुहल्ले में यह बदचलन आ गया।

दो-तीन दिन बाद डिप्टी साहब ने मुझसे कहा - ये जो मिसेज चोपड़ा हैं, इनका इतिहास आपको मालूम है? जानते हैं इनकी शादी कैसे हुई? तीन आदमी इनसे फँसे थे। इनका पेट फूल गया। बाकी दो शादीशुदा थे। चोपड़ा को इनसे शादी करनी पड़ी।

दूसरे दिन डिप्टी साहब का सिर थोड़ा और ऊँचा हो गया।

मुहल्ले वाले अभी भी कह रहे थे - शरीफों के मुहल्ले में कैसा बदचलन आदमी आ बसा।

तीन-चार दिन बाद फिर डिप्टी साहब ने कहा - श्रीवास्तव साहब की लड़की बहुत बिगड़ गई है। ग्रीन होटल में पकड़ी गई थी एक आदमी के साथ।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

डिप्टी साहब का सिर और ऊँचा हुआ।

मुहल्ले वाले अभी भी कह रहे थे - शरीफों के मुहल्ले में यह कहाँ का बदचलन आ गया।

तीन-चार दिन बाद डिप्टी साहब ने कहा - ये जो पांडे साहब हैं, अपने बड़े भाई की बीवी से फँसे हैं। सिविल लाइंस में रहता है इनका बड़ा भाई।

डिप्टी साहब का सिर और ऊँचा हो गया था।

मुहल्ले के लोग अभी भी कहते थे - शरीफों के मुहल्ले में यह बदचलन कहाँ से आ गया।

डिप्टी साहब ने मुहल्ले में लगभग हर एक के बारे में कुछ पता लगा लिया था। मैं नहीं कह सकता कि यह सब सच था या उनका गढ़ा हुआ। आदमी वे उस्ताद थे। ऊँचे कलाकार। हर बार जब वे किसी की बदचलनी की खबर देते, उनका सिर और ऊँचा हो जाता।

अब डिप्टी साहब का सिर पूरा तन गया था। चाल में अकड़ आ गई थी। लोगों से दुआ सलाम होने लगी थी। कुछ बात भी कर लेते थे।

एक दिन मैंने कहा - बीवी-बच्चों को ले आइए न। अकेले तो तकलीफ होती होगी।

डिप्टी साहब ने कहा - अरे साहब, शरीफों के मुहल्ले में मकान मिले तभी तो लाऊँगा बीवी-बच्चों को।

खेती

सरकार ने घोषणा की कि हम अधिक अन्न पैदा करेंगे और एक साल में खाद्य में आत्मनिर्भर हो जाएँगे।

दूसरे दिन कागज के कारखानों को दस लाख एकड़ कागज का आर्डर दे दिया गया। जब कागज आ गया, तो उसकी फाइलें बना दी गईं। प्रधानमंत्री के सचिवालय से फाइल खाद्य विभाग को भेजी गई। खाद्य विभाग ने उस पर लिख दिया कि इस फाइल से कितना अनाज पैदा होना है और अर्थ विभाग को भेज दिया।

अर्थ विभाग में फाइल के साथ नोट नत्थी किए गए और उसे कृषि विभाग भेज दिया गया। कृषि विभाग में उसमें बीज और खाद डाल दिए गए और उसे बिजली विभाग को भेज दिया। बिजली विभाग ने उसमें बिजली लगाई और उसे सिंचाई विभाग को भेज दिया गया।

अब यह फाइल गृह विभाग को भेज दी गई। गृह विभाग विभाग ने उसे एक सिपाही को सौंपा और पुलिस की निगरानी में वह फाइल राजधानी से लेकर तहसील तक के दफ्तरों में ले जाई गई। हर दफ्तर में फाइल की आरती करके उसे दूसरे दफ्तर में भेज दिया जाता।

जब फाइल सब दफ्तर घूम चुकी तब उसे पकी जानकर फूड कार्पोरेशन के दफ्तर में भेज दिया गया और उस पर लिख दिया गया कि इसकी फसल काट ली जाए। इस तरह दस लाख एकड़ कागज की फाइलों की फसल पककर फूड कार्पोरेशन के पास पहुँच गई।

एक दिन एक किसान सरकार से मिला और उसने कहा - 'हुजूर हम किसानों को आप जमीन, पानी और बीज दिला दीजिए और अपने अफसरों से हमारी रक्षा कीजिए, तो हम देश के लिए पूरा अनाज पैदा कर देंगे।'

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 12, December 2016

सरकारी प्रवक्ता ने जवाब दिया - 'अन्न की पैदावार के लिए किसान की अब जरूरत नहीं है। हम दस लाख एकड़ कागज पर अन्न पैदा कर रहे हैं।'

कुछ दिनों बाद सरकार ने बयान दिया - 'इस साल तो संभव नहीं हो सका, पर आगामी साल हम जरूर खाद्य में आत्मनिर्भर हो जाएँगे।' और उसी दिन बीस लाख एकड़ कागज का ऑर्डर और दे दिया गया।

निष्कर्ष

18 वर्ष की उम्र में वन विभाग में नौकरी की। खंडवा में ६ महीने अध्यापन। दो वर्ष (१९४१-४३) जबलपुर में स्पेस ट्रेनिंग कॉलेज में शिक्षण की उपाधि ली। 1942 में उन्होंने सरकारी नौकरी छोड़ी। 1943 से 1947 तक प्राइवेट स्कूलों में नौकरी। 1947 में नौकरी छोड़कर स्वतन्त्र लेखन की शुरूआत। जबलपुर से 'वसुधा' नाम की साहित्यिक मासिकी निकाली, नई दुनिया में 'सुनो भइ साधो', नयी कहानियों में 'पाँचवाँ कालम' और 'उलझी–उलझी' तथा कल्पना में 'और अन्त में' इत्यादि कहानियाँ, उपन्यास एवं निबन्ध–लेखन के बावजूद मुख्यत: व्यंग्यकार के रूप में विख्यात। परसाई मुख्यतः व्यंग -लेखक है, पर उनका व्यंग केवल मनोरजन के लिए नही है। उन्होंने अपने व्यंग के द्वारा बार-बार पाठको का ध्यान व्यक्ति और समाज की उन कमजोरियों और विसंगतियो की ओर आकृष्ट किया है जो हमारे जीवन को दूभर बना रही है। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं शोषण पर करारा व्यंग किया है जो हिन्दी व्यंग -साहित्य में अनूठा है। परसाई जी अपने लेखन को एक सामाजिक कर्म के रूप में परिभाषित करते है। उनकी मान्यता है कि सामाजिक अनुभव के बिना सच्चा और वास्तविक साहित्य लिखा ही नही जा सकता। परसाई जी मूलतः एक व्यंगकार है। सामाजिक विसंगतियो के प्रति गहरा सरोकार रखने वाला ही लेखक सच्चा व्यंगकार हो सकता है। परसाई जी सामायिक समय का रचनात्मक उपयोग करते है। उनका समूचा साहित्य वर्तमान से मुठभेड़ करता हुआ दिखाई देता है। परसाई जी हिन्दी साहित्य में व्यंग विधा को एक नई पहचान दी और उसे एक अलग रूप प्रदान किया, इसके लिए हिन्दी साहित्य उनका ऋणी रहेगा।

परसाई जबलपुर व रायपुर से प्रकाशित अखबार देशबंधु में पाठकों के प्रश्नों के उत्तर देते थे। उनके कॉलम का नाम था - परसाई से पूछें। पहले पहल हल्के, इश्किया और फिल्मी सवाल पूछे जाते थे। धीरे-धीरे परसाई जी ने लोगों को गम्भीर सामाजिक-राजनैतिक प्रश्नों की ओर प्रवृत्त किया। दायरा अंतर्राष्ट्रीय हो गया। यह पहल लोगों को शिक्षित करने के लिए थी। लोग उनके सवाल-जवाब पढ़ने के लिये अखबार का इंतजार करते थे।

विकलांग श्रद्धा का दौर के लिए १९८२ में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित।

संदर्भ

1) कहानी–संग्रह: हँसते हैं रोते हैं, जैसे उनके दिन फिरे, भोलाराम का जीव।
2) उपन्यास: रानी नागफनी की कहानी, तट की खोज, ज्वाला और जल।
3) संस्मरण: तिरछी रेखाएँ।
4) लेख संग्रह: तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेइमानी की परत, अपनी अपनी बीमारी, प्रेमचन्द के फटे जूते, माटी कहे कुम्हार से, काग भगोड़ा, आवारा भीड़ के खतरे, ऐसा भी सोचा जाता है, वैष्णव की फिसलन, पगडण्डियों का जमाना, शिकायत मुझे भी है, उखड़े खंभे, सदाचार का ताबीज, विकलांग श्रद्धा का दौर, तुलसीदास चंदन घिसैं, हम एक उम्र से वाकिफ हैं, बस की यात्रा।
5) परसाई रचनावली (सजिल्द तथा पेपरबैक, छह खण्डों में; राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित)
6) आँखन देखी - संपादक- कमला प्रसाद (वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित)
7) देश के इस दौर में - विश्वनाथ त्रिपाठी (राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित) ।
8) सुनो भाई साधो - हरिशंकर परसाई ।